रिपोर्ट

विषय: हिंदी प्रदेशों में भ्रमण

कक्षा- म.ए. प्रथम वर्ष

एच . एन .ओ- 218

नाम - रेखा यादव

हिंदी प्रदेशों में भ्रमण

हिंदी प्रदेशों में भ्रमण – इस पेपर को लेने का यही उद्देश्य था की कक्षा से बाहर, अपने शहर,प्रदेश से बाहर कुछ नया,अनसुना,अदेखा देखने या सिखने का मौका मिलेगा। हिंदी प्रदेशों में भ्रमण पेपर की तैयारी नवम्बर (2019) से चल रही थी। कुछ छात्र इस पेपर को लेने के लिए सहमत थे तो कुछ असेहमत थे। अत मे सबने पेपर लेकर अपनी सहमती प्रस्तुत की। भ्रमण को लेकर सारी जिमेदारी हमारी विभाग की अध्यक्ष प्रो. वृषाली मांदेकर और सर दीपक वेळीप बहुत अच्छी तरह से की। भ्रमण के लिए दो महत्वपूर्ण स्थान का चूनाव किया गया था- काशी और बौधगया। इन स्थानो के बारे हमने केवल किताबों में,दूरदर्शन पर देखा और पढ़ा था।

जबसे हिंदी प्रदेशों में भ्रमण के बारे में पता चला था तबसे ही भ्रमण पर जाने की उत्साह था। भ्रमण पर जाने के लिये सबने पहले से ही तयारीया कर रखी थी और मैनें भी की थी। बाजार जाकर कपड़े, जुते आदी कई चीजो की खरीदारी की ताकी रासते मे कोई तकलीफ ना हो। मजेदार बात तो यह थी की भ्रमण के एक दीन पहले तक मेरा बेग पेक नही हो पाया था वह सारी पैंकीग रात बर बेठकर की। भ्रमण पर लेजाने के लिए मैंने माँ से लिटी के साथ मालपुआ बनाने के लिए कहा था जिसके लिए मैंने उन्हें सुबह के चार बजे जगाया था।

7 फरवरी 2020 के सुबह 9:30 बजे गोवा मडगांव स्टेशन से हमारी ट्रेन थी जो गोवा से दादर तक जाने वाली थी पहुंचाने वाली थी कई लोगों के लिए यह ट्रेन का सफर नया था पर मेरे लिए नहीं क्योंकि इससे पहले मैंने कई बार अपने परिवार के साथ पर अपने स पार्टियों के साथ यह मेरा नया अनुभव होने वाला था करने वाली थी हम ट्रेन में बैठे और दादर के लिए निकल पड़े अगली अगले श्याम हम दादर पहुंच चुके थे दादर में हम रात को लोकमान्य तिलक टर्मिनस परी ही वेटिंग रूम में रुक गए दादर से हमारी दूसरी ट्रेन अगले अगली शाम 12:00 बजे वहां से निकलने वाली थी दाद लोकमान्य तिलक टर्मिनल

वेटिंग रूम में एक अजीब सा खींचा घटना हुई हुआ जो शायद में कभी भूल पाऊं। जैसे कि मैंने कहा क्यों वेटिंग रूम में ठहरे थे वहां कुछ पुलिस वाले जो व्यक्ति सो रहा था। उसे आकर उठाते और वापस चले जाते थे। वह बार-बार फेरा लगाते कि कोई सो तो नहीं रहा और जो व्यक्ति सोता उसे उसके बेंच पर आकर लाठी से मारते और उसे उठाते। यह देखकर हमारे ग्रुप में शायद उस दिन कोई सोया हो। सारे लोग डरे हुए थे कि अगर वे सो गए और उन पुलिसवालों ने आकर उन्हें पकड़ के ले गए या फिर उन्हें मारा तो उनका क्या होगा। वह रात भर फेरा लगाते रहे हम जागे रहने के लिए एक दूसरे से बातें करते,चाय पीते और मुंह पर पानी मार कर आते। अपने आप से जागे रहने को कहते लेकिन नींद का क्या है नींद तो आएगी जब तक लाठी की आवाज ना आती है सब सब थोड़ा थोड़ा सो लेते और फिर जब लाठी की आवाज आती तो अपनी जगह पर उठ-उठ कर बैठ जाते। जैसे तैसे सुबह हो गई। हम शाम होने का और हम दोपहर होने का इंतजार करने लगे।

अगली दोपहर 12:00 बजे 8 फरवरी 2020 को बनारस की ट्रेन दादर से निकली जो हमें अगले दिन 9 फरवरी 2020 को बनारस पहुंचाने वाली थी बनारस में हम अगले दिन रात के समय पहुंच गए वहां हमें होटल से ले जाने के लिए सवारी आई हुई थी जो हमें सीधे होटल तक ले गई होटल में पहुंचने के बाद होटल मैनेजर ने हमारा स्वागत किया और हमारे रूम की चाबियां हमें दी और हम एक एक करके अपने रूम में आराम करने के लिए चले गए। गुमने लिकलने से पहले मैंने बनारस और बौधगया के इतिहास के बारे खोजी और पढ़ी थी वही आपके सामने निम्नलिखीत प्रस्तुत है।

बनारस का इतिहास

वाराणसी को एशिया के सबसे प्राचीन शहर के रूप में देखा जा सकता है जो अब तक हासिल सबूतो पर निर्भर है। इसमें व्यक्तियों के रहने की व्यवस्था के प्रमाण 3000 वर्ष से अधिक पुरानी हैं। यद्या कुछ शोधकर्ता 4000 साल पुराना, कुछ इसे लगभग 5000 साल पुराना मानते हैं।

वाराणसी को 'बनारस' और 'काशी'कहा जाता है। बनारस, जिसे हिंदू धर्म सें सबसे धन्य शहर के रूप में देखा जाता है, एक अविमुक्त स्थान कहा जाता है। स्पष्ट करें कि वाराणसी की संस्कृति का गंगा की धारा और इसके धार्मिक महत्व के साथ एक अटूट संबंध है। यह शहर भारत, विशेष रूप से उत्तर भारत का एक सामाजिक और धार्मिक केंद्र रहा है।

प्रारंभ में वाराणसी कहा जाता है, यह दो पास के जलमार्गों से बना है जो विशिष्ट वरुण धारा और असि जलमार्ग हैं। ये जलमार्ग उत्तर और दक्षिण से अलग अलग गंगा की धार - में आते हैं। नाम का एक अन्य ना वरुण नाम से उत्पन्न हुआ है, जिसे संभवतप्राचीन :

काल में वर्ण कहा जाता था, और शहर को इनका नाम मिला। भगवान शिव को वाराणसी में पुनस्थापित किया गया था। :

वाराणसी के अधिकांश घाटों का पुनर्निर्माण 1700 ईस्वी के बाद किया गया था, जब यह शहर मराठा साम्राज्य का हिस्सा था। वर्तमान घाटों के संरक्षक मराठा, शिंदे (सिंधिया), होल्कर, भोंसले और पेशवाई (पेशवाई) हैं। यहां के कई घाट किंवदंतियों या पौराणिक कथाओं से जुड़े हैं, जबकि कई घाट निजी स्वामित्व में हैं। घाटों के किनारे बनारस की सुबह और नाव की सवारी करने के लिए भारी संख्या में यहां पर्यटक आते हैं। इस आर्टिकल में हम आपको बनारस के घाटों के बारे में विस्तार से बताने जा रहे हैं। वाराणसी में कुल 88 घाट हैं।

बौधगया का इतिहास

देश के बिहार राज्य में स्थित बौद्ध गया शहर में बना महाबोधि मंदिर बौद्ध धर्म का सबसे महत्वपूर्ण केन्द्र और पवित्र स्थानों में माना जाता है। यहीं पर बोधि वृक्ष के नीचे गौतम बुद्ध को केवल्य ज्ञान की प्राप्ति हुई थी। यह मंदिर वास्तुकला व बौद्ध धर्म की परम्पराओं का सुन्दर नमूना है। विभिन्न धर्मों एवं सम्प्रदायों के लोग यहां आध्यात्मिक शांति की तलाश में आते हैं। 19वीं सदी में ब्रिटिश पुराविद् कनिंघम तथा भारतीय पुराविद् डॉ. राजेन्द्र लाल के निर्देशन में 1883 ई. में यहां खुदाई की गई और काफी मरम्मत के बाद मंदिर के पुराने वैभव को स्थापित किया गया। ऐतिहासिक एवं धार्मिक बौद्ध मंदिर को वर्ष 2002 ई. में यूनेस्को द्वारा विश्व विरासत सूची में शामिल कर इसे विश्व विरासत घोषित किया गया। यहां देश के ही नहीं पूरे विश्व के पर्यटक खास कर बौद्ध मत में विश्वास रखने वाले धर्मावलम्बी बड़ी संख्या में यहां आते हैं। यह मंदिर विश्व के मानचित्र पर अपना विशेष धार्मिक महत्व रखता है।

मंदिर का निर्माण सम्राट अशोक द्वारा किया गया था। मंदिर में भगवान बुद्ध की पद्मासन मुद्रा में भव्य मूर्ति स्थापित है। जनश्रुति के अनुसार यह मूर्ति उसी जगह स्थापित है जहां बुद्ध को कैवल्य ज्ञान की प्राप्ति हुई थी। मंदिर के चारों ओर पत्थर की नक्काशीदार रेलिंग

लगी है जो प्राचीन अवशेष है। मंदिर की दक्षिण दिशा में 15 फीट ऊँचा अशोक स्तम्भ नजर आता है जो कभी 100 फीट ऊँचा था। मंदिर पेगोडानुमा बहुअलंकृत आर्य एवं द्रविड शैली में 170 फीट ऊँचा है।

मंदिर परिसर में उन सात स्थानों को भी चिन्हित किया गया है जहां बुद्ध ने ज्ञान प्राप्ति के बाद सात सप्ताह व्यतीत किये थे। मुख्य मंदिर के पीछे बुद्ध की सात फीट ऊँची लाल बलुआ पत्थर की विराजन मुद्रा में मूर्ति स्थापित है। मूर्ति के चारों ओर लगे विभिन्न रंगों के पताके मूर्ति को आकर्षक बनाते हैं। मूर्ति के आगे बलुआ पत्थर पर बुद्ध के विशाल

पदचिन्ह बने हैं, जिन्हें धर्म चक्र परिवर्तन का प्रतीक माना जाता है। यहां बुद्ध ने पहला सप्ताह बिताया था। परिसर में स्थित बोधि वृक्ष एवं खड़ी अवस्था में बनी बुद्ध की मूर्ति स्थल को अनिमेश लोचन कहा जाता है। यह चैत्य मंदिर के उत्तर–पूर्व में बना है जहां बुद्ध ने दूसरा सप्ताह व्यतीत किया था। इस स्थल पर 16 जनवरी 1993 को श्रीलंका के राष्ट्रपति रणसिंधे प्रेमादास द्वारा सोने का जंगला एवं सोने की छतरी का निर्माण करा कर इसे आकर्षक स्वरूप प्रदान किया। मुख्य मंदिर का उत्तरी भाग चंकामाना नाम से जाना जाता है जहां काले पत्थर का कमल का फूल बुद्ध का प्रतीक बना है जहां बुद्ध ने तीसरा सप्ताह बिताया था।

छत विहीन भग्नावशेष स्थल रत्न स्थान पर बुद्ध ने चौथा सप्ताह व्यतीत किया था। जनश्रुति के अनुसार बुद्ध यहां गहन चिन्तन में लीन थे तब उनके शरीर से प्रकाश की एक किरण निकली थी। प्रकाश की किरणों के इन्हीं रंगों का उपयोग विभिन्न देशों द्वारा यहां लगे पताके में किया जाता है। मुख्य मंदिर के उत्तरी दरवाजे से थोड़ी दूर स्थित अजयपाल वटवृक्ष के नीचे बुद्ध ने पाँचवां सप्ताह व्यतीत किया था। मंदिर के दांई ओर स्थित मुचलिंद सरोवर जो चारों तरफ से वृक्षों से घिरा है और सरोवर के मध्य में बुद्ध की मूर्ति स्थापित है जिसमें विशाल सर्प को बुद्ध की रक्षा करते हुए बताया गया है। यहां बुद्ध ने छठा सप्ताह व्यतीत किया था। परिसर के दक्षिण–पूर्व में स्थित राजयातना वृक्ष के नीचे बुद्ध ने सातवां सप्ताह व्यतीत किया था। बोध गया घूमने का सबसे अच्छ समय अप्रैल–मई में आने वाली बुद्ध जयंति का अवसर है जब यहां सिद्धार्थ का जन्मदिन विशेष उत्साह एवं परम्परा के

साथ मनाया जाता है। इस दौरान मंदिर को हजारों मोमबत्तियों से सजाया जाता है तथा जलती हुई मोमबत्तियों से उत्पन्न दृश्य मनुष्य के मानस पटल पर अंकित हो जाता है।

बौद्ध गया में 1934 ई. में बना तिब्बतियन मठ, 1936 में बना बर्मी विहार तथा इसी से लगा थाईमठ, इंडोसन–निप्पन–जापानी मंदिर, चीनी मंदिर एवं भूटानी मठ पर्यटकों के लिए दर्शनीय स्थल हैं। बौद्ध गया में स्थित पुरातात्विक संग्रहालय अपने आप में बेजोड़ है।

अगली दिन 10 फरवरी 2020 को हम बनारस हिंदू विश्वविद्यालय देखने के लिए निकल पड़े वहा पहले हमने श्री विश्वनाथ मंदिर के दर्शन करने गये। मंदिर का महोल अतंयत शांत और सुंदर था। वहा जाकर मन को शांती सी मिली। अगर मंदिर के बारे मे कहे तो श्री विश्वनाथ मंदिर, बिड़ला मंदिर के समुहों में सबसे प्रमुख व प्रसिद्ध मंदिर है। इस मंदिर में सभी देवी देवताओं के छोटे बड़े मंदिर है। जिनमें सबसे प्रमुख मंदिर भगवान शिव का है।

श्री विश्वनाथ मंदिर के अन्दर भगवान शिव के नटराज रूप की बहुत सुन्दर मूर्ति है। माता पार्वती, भगवान गणेश, पंचमुखी महादेव, भगवान हनुमान, सरस्वती और नंदी की भी मुर्ति स्थिपित है। भगवद गीता का संपूर्ण पाठ और पवित्र हिंदू धर्मग्रंथों के अर्क को मंदिर की आंतरिक संगमरमर की दीवारों पर चित्रण के साथ अंकित किया गया है।

श्री काशी विश्वनाथ मंदिर, जो कि वाराणसी में स्थित है, को कई बार नष्ट व पुनर्निर्माण किया गया था। 1194 में कुतुब-उद-दीन ऐबक द्वारा, 1447-1458 के बीच हुसैन शाह

शर्की द्वारा और फिर 1669 ईस्वी में औरंगजेब द्वारा नष्ट किया गया था। 1930 के दशक में, पंडित मदन मोहन मालवीय ने काशी हिन्दू विश्वविद्यालय के परिसर में श्री काशी विश्वनाथ मंदिर की जैसा बनाने की योजना बनाई। बिड़ला परिवार ने मार्च 1931 में निर्माण और नींव रखी। इस मंदिर का पूर्ण निर्माण 1966 में पुरा हुआ, तथा मंदिर के बनाने में लगभग 35 वर्ष लग गये। मंदिर भारत के सबसे ऊंचे मंदिरों में से एक है। मंदिर की कुल ऊंचाई 77 मीटर (253 फीट) है। मंदिर का डिज़ाइन श्री काशी विश्वनाथ मंदिर से प्रेरित था और मंदिर को लाल रंग के पत्थर और ज्यादातर सफेद संगमरमर से बनाया गया है।

मंदिर दर्शन के बाद हम सब वहा के पुस्तकालय को देखने चले गये। बनारस हिंदू विश्वविद्यालय की पुस्तकालय अतंयत विशाल और सुंदर था। मेरा मन तो कर रहा था कि मै और कुछ देर वही रह जाऊ। पुस्तकालय का बाहरी परिसर बहुत शांत था वहा कई बच्चे बेठकर पढ़ाई भी कर रहे थे। थोडी देर वहा समय बिताने के बाद हम बनारस हिंदू

विश्वविद्यालय के हिंदी विभाग को देखने के लिए चले गए।

बनारस हिंदू विश्वविद्यालय के हिंदी विभाग के प्रोफेसर ने अपनी गोंवा से जुड़ा उनका एक अनुभव हमारे सामने प्रकट किया कि वह कि वह एक बार गोवा आए थे 1989 प्रोफेसर के इंटरव्यू के लिए। वह चाहते तो वहां इंटरव्यू दीये बीना सिफारिश पत्र के द्वारा हासिल कर सकते थे लेकिन उन्होंने नहीं किया। क्योंकि उस समय उन्हें ऐसा करना सही नही लगा । उस इंटरव्यू जो एक्सपर्ट आने वाले थे वह उनके गुरु थे इसी वजह से उन्होंने अपनी प्रतीभा के दम पर नौकरी हासील करना चाहते थे ना की सिफारिश पत्र के द्वारा । यह संबंध उनका गोवा विश्वविद्यालय के साथ था।

हमसे बात करते उन्होंने हमसे हमारा परिचय पूछा और हमें हमारे विषयों और क्रम में क्या-क्या पढ़ाया जाता है उसके बारे में भी बताने को कहा। इसके बाद उन्होंने मुंशी प्रेमचंद जी की एक कहानी के बारे में बताया ईदगाह नामक शीर्षक से जो प्रसिद्ध है। उसके बारे में कुछ विशेष अनकही बातों को उन्होंने हमारे सामने प्रकट किया। कहानी एक चिमटा है। पहले चिमटे कुरू कुरूप जिसका कोई सौंदर्य नहीं था। आजकल अलग-अलग तरह के चिमटे आने लगे हैं जो खूबसूरत नजर आते हैं जैसे स्टील के आदि। उस चिमटे के द्वारा दादी अमीना के प्रति हामिद की संवेदना को प्रेमचंद जी जोड़ते हैं।

प्रेमचंद जी चिमटा इतना सुंदर लगने लगता है कि सब बच्चे अपने रंगीन खिलौने चिमटे को बदलते हैं अदला- बदली करते हैं। और किस तरह से जब हामिद का पहले मजाक उड़ाया जा रहा था वही प्रेमचंद ऐसा वातावरण रचते हैं चिमटे जैसी असुंदर चीज सुंदर चीज लगने लगती है। सुंदरता का संबंध हमारी संवेदनाओ के साथ होता है।

इस कहानी में प्रेमचंद सुंदरता की कसौटी बदलते हुए दिखाई देते हैं। कहानी में हामिद अगर चाहता तो उस 8 आना को लेकर खिलौने खरीद सकता था,मिठाई खरीद सकता था पर उसने एक अलग निर्णय लिया। प्रेमचंद जी भी जीवन को एक अलग नज़रीये से देखने को कहते है और लोग क्या कहेंगे या दुनिया वाले क्या कहेंगे इसकी परवाह ना करके अपने निर्णय पर अटल रहने की सलाह देते है। एक अच्छे निर्णय से हम अपने लक्ष्य को प्राप्त कर सकते है। उन्हे सुनकर कुछ नया जानने और सिखने को मिला। हम सब को उनके विभाग की पुस्तका को भी देखने का अवसर मिला।वहा जाकर पता चला

की उसी दिन हिंदी पुस्तको का प्रदर्शन का आयोजन हो रहा था। कुछ लोग प्रस्तुत की। प्रो. वृषाली मांदेकर के साथ होटल चले गये और कुछ लोग सर दीपक वेळीप के साथ पुस्तक प्रदर्शनी के लिए रूक गये। पुस्तक प्रदर्शनी के बाद हम सब सिधे अपने होटल चले गये। दूसरे सुबह 11 फरवरी 2020 को हम सब सारनाथ के लिए निकल पड़े हमे वहाँ पहुचने के लिए लगभग 1 घंटा लगा। सारनाथ में हमने गौत्म बुद्ध कि विशाल प्रतीमा के दर्शन किये और आस-पास कई गौत्म बुद्ध की मुर्तीयों के दर्शन कर वहा से प्रेंमचद जी के गाँव लमही के लिये निकले वहाँ जाकर हमें प्रेंमचद जी के बारे में सुने अनसुने बातो का पता चला। प्रेंमचद जी के गाँव का मकान आज भी सही सलामत है। जहाँ उनका जन्म हुआ था उसी जगह पर उनका एक पुतला भी है।

प्रेमचंद (31 जुलाई 1880 – 8 अक्टूबर 1936) हिन्दी और उर्दू के महानतम भारतीय लेखकों में से एक थे। मूल नाम धनपत राय श्रीवास्तव, प्रेमचंद को नवाब राय और मुंशी प्रेमचंद के नाम से भी जाना जाता है। उपन्यास के क्षेत्र में उनके योगदान को देखकर बंगाल के विख्यात उपन्यासकार शरतचंद्र चट्टोपाध्याय ने उन्हें उपन्यास सम्राट कहकर संबोधित किया था। प्रेमचंद ने हिन्दी कहानी और उपन्यास की एक ऐसी परंपरा का विकास किया जिसने पूरी सदी के साहित्य का मार्गदर्शन किया। आगामी एक पूरी पीढ़ी को गहराई तक प्रभावित कर प्रेमचंद ने साहित्य की यथार्थवादी परंपरा की नींव रखी।

उनका लेखन हिन्दी साहित्य की एक ऐसी विरासत है जिसके बिना हिन्दी के विकास का अध्ययन अधूरा होगा। वे एक संवेदनशील लेखक, सचेत नागरिक, कुशल वक्ता तथा सुधी (विद्वान) संपादक थे। बीसवीं शती के पूर्वार्द्ध में, जब हिन्दी में तकनीकी सुविधाओं का अभाव था,उनका योगदान अतुलनीय है। प्रेमचंद के बाद जिन लोगों ने साहित्य को सामाजिक सरोकारों और प्रगतिशील मूल्यों के साथ आगे बढ़ाने का काम किया, उनमें यशपाल से लेकर मुक्तिबोध तक शामिल हैं। उनके पुत्र हिन्दी के प्रसिद्ध साहित्यकार अमृतराय हैं जिन्होंने इन्हें कलम का सिपाही नाम दिया था

जीवन परीचय

प्रेमचंद का जन्म वाराणसी के निकट लमही गाँव में हुआ था। उनकी माता का नाम आनन्दी देवी था तथा पिता मुंशी अजायबराय लमही में डाकमुंशी थे। उनकी शिक्षा का आरंभ उर्दू, फारसी से हुआ और जीवनयापन का अध्यापन से पढ़ने का शौक उन्हें बचपन से ही लग गया। 13 साल की उम्र में ही उन्होंने तिलिस्म-ए-होशरुबा पढ़ लिया और उन्होंने उर्दू के मशहूर रचनाकार रतननाथ 'शरसार', मिर्ज़ा हादी रुस्वा और

मौलाना शरर के उपन्यासों से परिचय प्राप्त कर लिया। १८९८ में मैट्रिक की परीक्षा उत्तीर्ण करने के बाद वे एक स्थानीय विद्यालय में शिक्षक नियुक्त हो गए। नौकरी के साथ ही उन्होंने पढ़ाई जारी रखी।१९१० में उन्होंने अंग्रेजी, दर्शन, फारसी और इतिहास लेकर इंटर पास किया और १९१९ में बी.ए. पास करने के बाद शिक्षा विभाग के इंस्पेक्टर पद पर नियुक्त हुए।

सात वर्ष की अवस्था में उनकी माता तथा चौदह वर्ष की अवस्था में पिता का देहान्त हो जाने के कारण उनका प्रारंभिक जीवन संघर्षमय रहा। उनका पहला विवाह उन दिनों की परंपरा के अनुसार पंद्रह साल की उम्र में हुआ जो सफल नहीं रहा। वे आर्य समाज से प्रभावित रहे जो उस समय का बहुत बड़ा धार्मिक और सामाजिक आंदोलन था। उन्होंने विधवा-विवाह का समर्थन किया और १९०६ में दूसरा विवाह अपनी प्रगतिशील परंपरा के अनुरूप बाल-विधवा शिवरानी देवी से किया। उनकी तीन संताने हुईं- श्रीपत राय, अमृत राय और कमला देवी श्रीवास्तव। १९१० में उनकी रचना सोज़े-वतन (राष्ट्र का विलाप) के लिए हमीरपुर के जिला कलेक्टर ने तलब किया और उन पर जनता को भड़काने का आरोप लगाया। सोजे-वतन की सभी प्रतियाँ जब्त कर नष्ट कर दी गईं। कलेक्टर ने नवाबराय को हिदायत दी कि अब वे कुछ भी नहीं लिखेंगे, यदि लिखा तो जेल भेज दिया जाएगा। इस समय तक प्रेमचंद, धनपत राय नाम से लिखते थे। उर्दू में प्रकाशित होने वाली ज़माना पत्रिका के सम्पादक और उनके अजीज दोस्त मुंशी दयानारायण निगम ने उन्हें प्रेमचंद नाम से लिखने की सलाह दी। इसके बाद वे प्रेमचन्द के नाम से लिखने लगे। उन्होंने आरंभिक लेखन ज़माना पत्रिका में ही किया। जीवन के अंतिम दिनों में वे गंभीर रूप से बीमार पड़े। उनका उपन्यास मंगलसूत्र पूरा नहीं हो सका और लम्बी बीमारी के बाद ८ अक्टूबर १९३६ को उनका निधन हो गया। उनका अंतिम उपन्यास मंगल सूत्र उनके पुत्र अमृत ने पूरा किया।

कार्यक्षेत्र

प्रेमचंद आधुनिक हिन्दी कहानी के पितामह और उपन्यास सम्राट माने जाते हैं। यों तो उनके साहित्यिक जीवन का आरंभ १९०१ से हो चुका था पर उनकी पहली हिन्दी

कहानी सरस्वती पत्रिका के दिसम्बर अंक में १९१५ में सौत नाम से प्रकाशित हुई और १९३६ में अंतिम कहानी कफन नाम से प्रकाशित हुई। बीस वर्षों की इस अवधि में उनकी कहानियों के अनेक रंग देखने को मिलते हैं। उनसे पहले हिंदी में काल्पनिक, एय्यारी और पौराणिक धार्मिक रचनाएं ही की जाती थी। प्रेमचंद ने हिंदी में यथार्थवाद की शुरूआत की। " भारतीय साहित्य का बहुत सा विमर्श जो बाद में प्रमुखता से उभरा चाहे वह दलित साहित्य हो या नारी साहित्य उसकी जड़ें कहीं गहरे प्रेमचंद के साहित्य में दिखाई देती हैं।" प्रेमचंद के लेख 'पहली रचना' के अनुसार उनकी पहली रचना अपने मामा पर लिखा व्यंग्य थी, जो अब अनुपलब्ध है। उनका पहला उपलब्ध लेखन उनका उर्दू उपन्यास 'असरारे मआबिद' है। प्रेमचंद का दूसरा उपन्यास 'हमखुर्मा व हमसवाब' जिसका हिंदी रूपांतरण 'प्रेमा' नाम से 1907 में प्रकाशित हुआ। इसके बाद प्रेमचंद का पहला कहानी संग्रह सोज़े-वतन नाम से आया जो १९०८ में प्रकाशित हुआ। सोज़े-वतन यानी देश का दर्द। देशभक्ति की भावना से ओतप्रोत होने के कारण इस पर अंग्रेज़ी सरकार ने रोक लगा दी और इसके लेखक को भविष्य में इस तरह का लेखन न करने की चेतावनी दी। इसके कारण उन्हें नाम बदलकर लिखना पड़ा। 'प्रेमचंद' नाम से उनकी पहली कहानी बड़े घर की बेटी ज़माना पत्रिका के दिसम्बर १९१० के अंक में

प्रकाशित हुई। मरणोपरांत उनकी कहानियाँ मानसरोवर नाम से 8 खंडों में प्रकाशित हुई। कथा सम्राट प्रेमचन्द का कहना था कि साहित्यकार देशभक्ति और राजनीति के पीछे चलने वाली सच्चाई नहीं बल्कि उसके आगे मशाल दिखाती हुई चलने वाली सच्चाई है। यह बात उनके साहित्य में उजागर हुई है। १९२१ में उन्होंने महात्मा गांधी के आह्वान पर अपनी नौकरी छोड़ दी। कुछ महीने मर्यादा पत्रिका का संपादन भार संभाला, छह साल तक माधुरी नामक पत्रिका का संपादन किया, १९३० में बनारस से अपना मासिक पत्र हंस शुरू किया और १९३२ के आरंभ में जागरण नामक एक साप्ताहिक और निकाला। उन्होंने लखनऊ में १९३६ में अखिल भारतीय प्रगतिशील लेखक संघ के सम्मेलन की अध्यक्षता की। उन्होंने मोहन दयाराम भवनानी की अजंता सिनेटोन कंपनी में कहानी-लेखक की नौकरी भी की। १९३४ में प्रदर्शित मजदूर नामक फिल्म की कथा लिखी और कंट्रेक्ट की साल भर की अवधि पूरी किये बिना ही दो

महीने का वेतन छोड़कर बनारस भाग आये क्योंकि बंबई (आधुनिक मुंबई) का और उससे भी ज़्यादा वहाँ की फिल्मी दुनिया का हवा-पानी उन्हें रास नहीं आया। उन्होंने मूल रूप से हिंदी में 1915 से कहानियां लिखना और 1918 (सेवासदन) से उपन्यास लिखना शुरू किया। प्रेमचंद ने कुल करीब तीन सौ कहानियाँ, लगभग एक दर्जन उपन्यास और कई लेख लिखे। उन्होंने कुछ नाटक भी लिखे और कुछ अनुवाद कार्य भी किया। प्रेमचंद के कई साहित्यिक कृतियों का अंग्रेज़ी, रूसी, जर्मन सहित अनेक भाषाओं में अनुवाद हुआ। गोदान उनकी कालजयी रचना है। कफन उनकी अंतिम कहानी मानी जाती है। उन्होंने हिंदी और उर्दू में पूरे अधिकार से लिखा। उनकी अधिकांश रचनाएं मूल रूप से उर्दू में लिखी गई हैं लेकिन उनका प्रकाशन हिंदी में पहले हुआ। तैंतीस वर्षों के रचनात्मक जीवन में वे साहित्य की ऐसी विरासत सौंप गए जो गुणों की दृष्टि से अमूल्य है और आकार की दृष्टि से असीमीत।

लमही देखने के बाद हमने कबीर दास के जन्म स्थान की ओर प्रस्थान किया।

कबीर दास भारत के महान कवि और समाज सुधारक थे। कबीर दास के नाम का अर्थ महानता से है। वे भारत के महानतम कवियों में से एक थे।

जब भी भारत में धर्म, भाषा, संस्कृति की चर्चा होती है तो कबीर दास जी का नाम का जिक्र सबसे पहले होता है क्योंकि कबीर दास जी ने अपने दोहो के माध्यम से भारतीय संस्कृति को दर्शाया है|

इसके साथ ही उन्होनें जीवन के कई ऐसे उपदेश दिए हैं जिन्हें अपनाकर दर्शवादी बन सकते हैं इसके साथ ही कबीर दास ने अपने दोहों से समाज में फैली कुरोतियों को दूर करने की कोशिश की है और भेदभाव को मिटाया है। कबीर पंथ के लोग को कबीर पंथी कहे जाते है जो पूरे उत्तर और मध्य भारत में फैले हुए है। संत कबीर के लिखे कुछ महान रचनाओं में बीजक, कबीर ग्रंथावली, अनुराग सागर, सखी ग्रंथ आदि है।

उनका का जन्म वर्ष 1440 में और मृत्यु वर्ष 1518 में हुई थी। वे हिन्दी साहित्य के विद्वान थे। ये स्पष्ट नहीं है कि उनके माता-पिता कौन थे लेकिन ऐसा सुना गया है कि उनकी परवरिश करने वाला कोई बेहद गरीब मुस्लिम बुनकर परिवार था। कबीर बेहद धार्मिक व्यक्ति थे और एक महान साधु बने। अपने प्रभावशाली परंपरा और संस्कृति से उन्हें विश्व प्रसिद्धि मिली।

उसी दिन हम सबशाम को गंगा दर्शन के लिए गये गंगा का किनारा बहुत सुंदर और उसका जल निर्मल,अपने गती में बेहता दिखाई दे रहा था।

अस्सी घाट

इस घाट पर विदेशी छात्र, शोधकर्ता, कलाकार और पर्यटक भारी संख्या में आते हैं। यहां रोजाना सुबह लगभग 300 लोग जबकि त्योहारों के दौरान लगभग 2500 लोग प्रति घंटे आते हैं। इस घाट पर शिवरात्रि के दौरान एक साथ लगभग 22,500 लोग जमा होते हैं। एक मान्यता के अनुसार, देवी दुर्गा ने शुंभ और निशुंभ नामक राक्षसों का वध करने के बाद उनकी तलवार को यहां फेंका था। जहाँ वह तलवार गिरी थी, उस नदी को असी नदी के नाम से जाना जाता था। गंगा नदी और असि के संगम स्थल को अस्सी घाट के नाम से जाना जाता है।

अहिल्याबाई घाट

1778 में केवलागिरि घाट का विस्तार करके इसे मध्य प्रदेश की रानी महारानी अहिल्याबाई होल्कर के संरक्षण में बनाया गया था। इसलिए उनके नाम पर इस घाट का नाम रखा गया। इस घाट पर महल के अलावा एक विशाल आवासीय परिसर और हनुमान मंदिर है और दो अन्य मंदिर भी हैं।

दरभंगा घाट

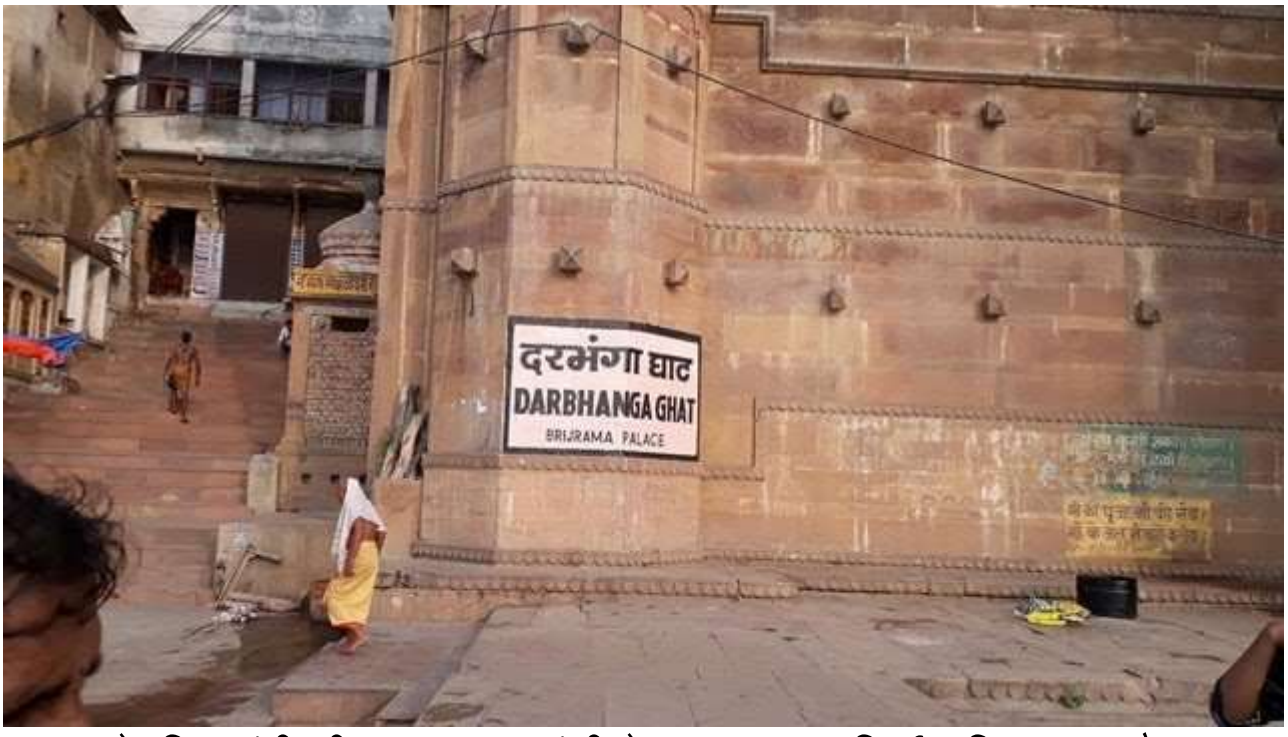

नागपुर के वित्त मंत्री श्रीधर नारायण मुंशी ने इस घाट का निर्माण किया था और आंशिक रूप से महलनुमा इमारत थी। उनके नाम पर ही इस घाट को मुंशी घाट कहा जाता है। 1915 में दरभंगा के ब्राह्मण राजा ने इस घाट को खरीदा और दरभंगा घाट के रूप में विकसित किया। महलनुमा इमारत बलुआ पत्थर से बनी है जिसमें एक सुंदर पोर्च और ग्रीक खंभे हैं।

दशाश्वमेध घाट

दशाश्वमेध घाट को वाराणसी में मुख्य घाट के रूप में जाना जाता है। यह विश्वनाथ मंदिर के करीब स्थित है और सबसे शानदार घाटों में से एक है। माना जाता है कि भगवान ब्रह्मा ने भगवान शिव का स्वागत करने के लिए इसे बनाया था। यहां महाराजा जय सिंह द्वारा निर्मित एक वेधशाला है। इस घाट की गंगा आरती बहुत प्रसिद्ध है जो प्रतिदिन शाम को की जाती है। यहां भगवान शिव, गंगा, सूर्य, अग्नि और पूरे ब्रह्मांड के लिए आरती की जाती है।

दिगपतिया घाट

कौसट्टी घाट के निचले हिस्से को 1830 में दिगपटिया के राजा ने बनवाया था। इसलिए इसे दिगपतिया घाट के नाम से जाना जाता है। घाट पर बनाया गया महल बंगाली कला और शैली का एक उदाहरण है। महल के दोनों ओर पोर्च हैं। मंदिर के परिसर में काली, लोक देवी, शिव, गणेश और कार्तिकेय के पुराने चित्र हैं। देवी देवताओं के 64 योगिनी छवियों में से 16 वर्तमान में वाराणसी में मौजूद हैं। उनमें से दो घाट की सीढ़ियों पर हैं।

नारद घाट

इस घाट का पुराना नाम कुवई घाट है। इसका निर्माण 1788 में एक मठ प्रमुख दत्तात्रेय स्वामी द्वारा किया गया था। नारद घाट पर चार महत्वपूर्ण मूर्तियाँ नारदेश्वर, अत्रिश्वर, वासुकिश्वरा और दत्तात्रेयश्वर हैं।

गंगा महल घाट

गंगा महल घाट वाराणसी के प्रमुख घाटों में से एक है। इसका निर्माण 1830 ईस्वी में नारायण वंश द्वारा कराया गया था। चूंकि महल को घाट पर रखा गया था, इसलिए घाट का नाम “गंगा महल घाट” रखा गया। इस महल का उपयोग अब शिक्षण संस्थानों द्वारा किया जाता है। पहली मंजिल का उपयोग “कनाडा के विश्व साक्षरता कार्यक्रम” द्वारा किया जाता है और ऊपरी मंजिलों का उपयोग कार्लस्टेड विश्वविद्यालय द्वारा आयोजित “इंडो-स्वीडिश स्टडी सेंटर” द्वारा किया जाता है।

ललिता घाट

नेपाल के दिवंगत राजा ने इस घाट का निर्माण वाराणसी के उत्तरी क्षेत्र में कराया था। यह गंगा केशव मंदिर का स्थान है, जो काठमांडू शैली में बना एक लकड़ी का मंदिर है, मंदिर में पशुपतिेश्वर की एक मूर्ति है, जो भगवान शिव का एक रूप है। यह चित्रकारों और फोटोग्राफरों की पसंदीदा साइट है।

हरिश्चंद्र घाट

हरिश्चंद्र घाट वाराणसी के सबसे पुराने घाटों में से एक है। इस घाट का नाम एक पौराणिक राजा हरिश्चंद्र के नाम पर पड़ा है, जिन्होंने कभी सत्य और दान की दृढ़ता के लिए यहां श्मशान घाट पर काम किया था। यह माना जाता है कि देवताओं ने उसे अपने संकल्प, दान और सच्चाई के लिए पुरस्कृत किया और अपने खोए हुए सिंहासन और उसके मृत बेटे को वापस कर दिया। माना जाता है कि अगर किसी व्यक्ति का अंतिम संस्कार हरिश्चंद्र घाट पर किया जाता है, तो उस व्यक्ति को मोक्ष की प्राप्ति होती है।

चेत सिंह घाट

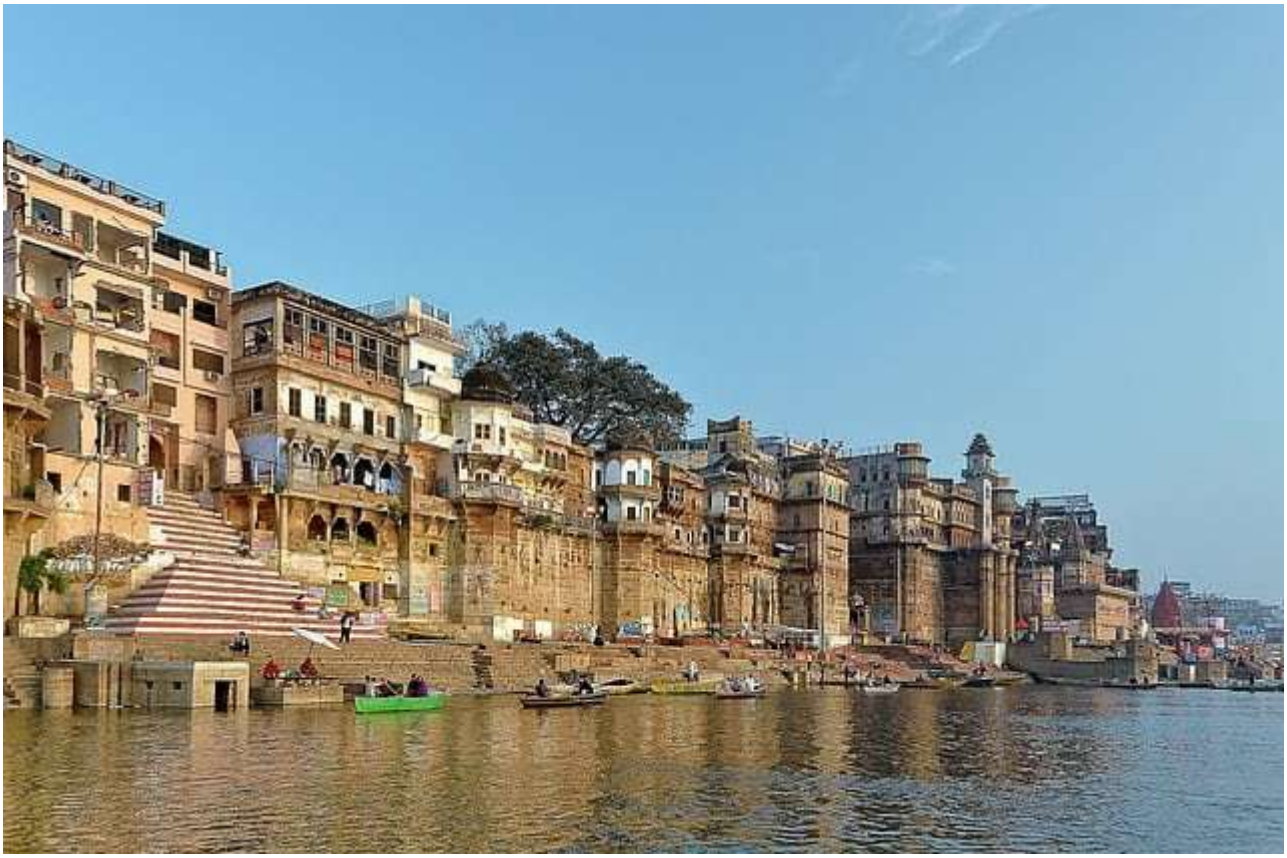

चेत सिंह घाट एक ऐतिहासिक गढ़ घाट है। इस स्थान पर 1781 में वारेन हेस्टिंग्स और चेत सिंह की सेना के बीच युद्ध हुआ था। महाराजा प्रभु नारायण सिंह ने 19 वीं शताब्दी के उत्तरार्ध में किले और घाट को ब्रिटिशों से लिया था। इस घाट के चार भाग हैं जिन्हें चीता सिंह घाट, निरंजनी घाट, निरवानी घाट और शिवाला घाट के नाम से जाना जाता है।

जैन घाट

जैन घाट का नाम 7 वें जैन तीर्थंकर सुपार्श्वनाथ के नाम पर रखा गया था जिनके बारे में माना जाता था कि वे पड़ोस में पैदा हुए थे। उनकी स्मृति में 1885 में घाट के ऊपरी हिस्से में एक मंदिर बनाया गया था। 1931 से पहले यह वचराजा घाट (Vaccharaja Ghat) का हिस्सा था, लेकिन जब बाबू शेखर चंदा ने जैन भिक्षुओं की सहायता से इस हिस्से को अलग किया तब से यह जैन घाट कहलाता है।

सिंधिया घाट

सिंधिया घाट मणिकर्णिका घाट के उत्तम में है और इसे शिंदे घाट की सीमा के रूप में भी जाना जाता है। यहां स्थित शिव मंदिर लगभग 150 साल पुराना है और आंशिक रूप से नदी में डूबा हुआ है।

मणिकर्णिका घाट

कहा जाता है कि देवी सती के जलते हुए शरीर को भगवान शिव जब हिमालय लेकर जा रहे थे तब सती के शरीर के हिस्से पृथ्वी पर गिरने लगे। जहां जहां देवी सती के शरीर के टुकड़े गिरे वहां भगवान शिव ने शक्ति पीठ की स्थापना की। मणिकर्णिका घाट पर माता सती के कान का आभूषण गिर गया था। यह वाराणसी में सबसे प्रसिद्ध, पवित्र और सबसे पुराने घाटों में से एक है। इस घाट पर हिंदू रीति रिवाजों से अंतिम संस्कार किया जा सकता है।

राजेंद्र प्रसाद घाट

पहले यह दशाश्वमेध घाट का हिस्सा था। 1979 में भारत के पहले राष्ट्रपति राजेंद्र प्रसाद की स्मृति और सम्मान में इस घाट का नाम राजेंद्र प्रसाद घाट रखा गया। माना जाता है कि तीसरी शताब्दी ईस्वी में भारशिव नागा राजाओं ने यहां घोड़े की बलि दी

थी। 980 के दशक की शुरुआत तक इस घाट का इस्तेमाल लकड़ी, रेत और पत्थर की प्लेटों के कारोबार के लिए किया जाता था।

विजयनगरम घाट

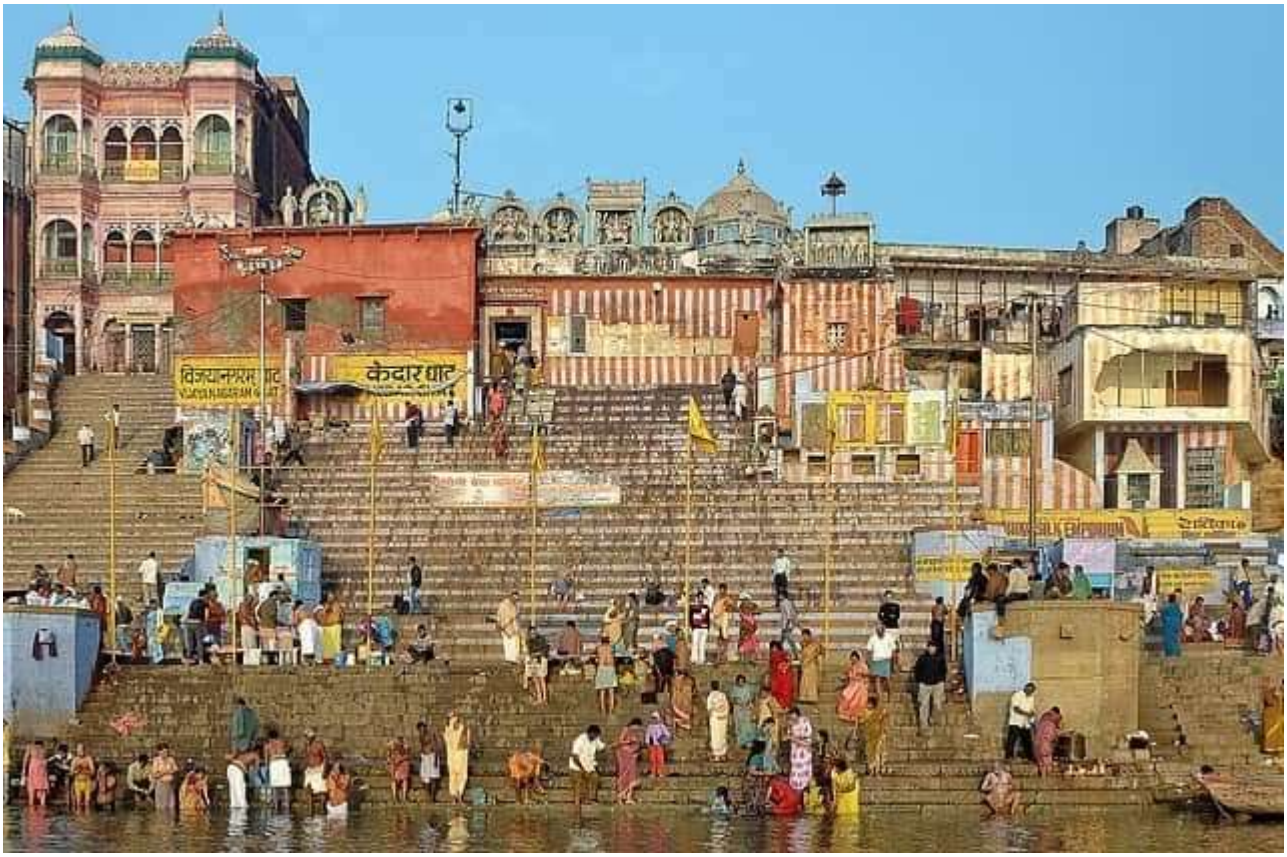

इस घाट का नाम दक्षिण भारत की तत्कालीन विजयनगरम रियासत के नाम पर रखा गया था। विजयनगरम के महाराजा ने 1890 में इस घाट के निर्माण के लिए धनराशि प्रदान की। यह आंध्र प्रदेश का एकमात्र घाट है। यहां भगवान शिव और निस्पापेश्वर को समर्पित मंदिर हैं।

राजा घाट

इस घाट को 1720 में राजाराव बालाजी द्वारा बनवाया गया था। इस घाट के उत्तरी भाग में महल और दक्षिणी भाग में अन्नपूर्णा मठ है। 1965 में उत्तर प्रदेश सरकार ने इस घाट का जीर्णोद्धार किया और लाल पत्थरों से बने चरणों का निर्माण किया। इस घाट पर मां गंगा के सम्मान में तेल के दीपोत्सव का आयोजन किया जाता

इन सब घाटों के अलावा कई घाट मैजुद है गंगा के किनारे। हमने जिस नाव कि सवारी की उस नाव के खेवइने हमे काशी करवट मंदिर के पिछे का रहस्य और मणिकर्णिका घाट का रहस्य भी बताया जौसे की-

काशी करवट मंदिर

15वीं और 16वीं शताब्दी के मध्य कई राजा,रानियां काशी रहने के लिए आए थे। काशी प्रवास के दौरान उन्होंने कई हवेलियां ,कोठियां और मंदिर बनारस में बनवाएं। उनकी मां

भी यहीं रहा करती थीं। उस समय उनका सेवक भी अपनी मां को काशी को लेकर आया था। सिंधिया घाट पर राजा के सेवक ने राजस्थान समेत देश के कई शिल्पकारों को बुलाकर मां के नाम से महादेव का मंदिर बनवाना शुरू किया। मंदिर बनने के बाद वो मां को लेकर वहां गया और बोला कि तेरे दूध का कर्ज उतार दिया है। मां ने मंदिर के अंदर विराजमान महादेव को बाहर से प्रणाम किया और जाने लगी। बेटे ने कहा कि मंदिर के अंदर चलकर दर्शन कर लो। तब मां ने जवाब दिया कि बेटा पीछे मुडक़र मंदिर को देखो, वो जमीन में एक तरफ धंस गया है। कहा जाता है तब से लेकर आज तक ये मंदिर ऐसे ही एक तरफ झुका हुआ है। बताया जाता है कि सेवक की मां का नाम रत्ना था, इसलिए मंदिर का नाम रत्नेश्वर महादेव पड़ गया।

मणिकर्णिका घाट का नामकरण के पिछे का इतिहास

भगवान शिव को अपने भक्तों से छुट्टी ही नहीं मिल पाती थी। देवी पार्वती इससे परेशान हुईं और शिवजी को रोके रखने हेतु अपने कान की मणिकर्णिका वहीं छुपा दी और शिवजी से उसे ढूंढने को कहा। शिवजी उसे ढूंढ नहीं पाये और आज तक जिसकी भी अन्त्येष्टि उस घाट पर की जाती है, वे उससे पूछते हैं कि क्या उसने देखी है? प्राचीन ग्रन्थों के अनुसार मणिकर्णिका घाट का स्वामी वही चाण्डाल था, जिसने सत्यवादी राजा हरिशचंद्र को खरीदा था। उसने राजा को अपना दास बना कर उस घाट पर अन्त्येष्टि करने आने वाले लोगों से कर वसूलने का काम दे दिया था। इस घाट की विशेषता ये हैं, कि यहां लगातार हिन्दू अन्त्येष्टि होती रहती हैं व घाट पर चिता की अग्नि लगातार जलती ही रहती है, कभी भी बुझने नहीं पाती। इसी कारण इसको

महाश्मशान नाम से भी जाना जाता है।

गंगा घाट पर होनेवाली आरती को देखने का भी सौभाग्य हम सबको प्रदान हुआ।

बनारस आकर लगता है कि देश का पहला कंक्रीट का जंगल यहीं गलियों में फलाफूला होगा। संकरी संकरी गलियां, पत्थरों की गलियां, सैकड़ों गलियां, गलियों में हजारों अट्टालिकाएं। हवा भी थोड़ा संभलकर ही इन गलियों में घुसती होगी। हजारों भवनों की उतनी ही खास भवनशैलियां। वैसे कहा यही जाता है कि ये गलियां जीवन की बातें करती हैं। हर गली का अपना अतीत है, अपना किस्सा, अपना इतिहास और अपना अंदाज। ये गलियां खुलती भी हैं और भुलभुलैया सी नचाती भी हैं। पुराने काशी में ठग अमूमन इन भुलभुलैया वाली गलियों का बड़ा फायदा उठाते थे। गलियां बनारस की शान है।

12 फरवरी 2020 को सुबह हम सब लडकियाँ साडी पहनकर विश्व प्रसिद्ध काशी विश्वनाथ मंदिर को देखने का सौभाग्य हम लोगो को प्रदान हुआ। वाराणसी में गंगा नदी के तट पर विद्यमान है। द्वादश ज्योतिर्लिंग में प्रमुख काशी विश्वनाथ जहां राम रूप में स्थापित बाबा विश्वनाथ शक्ति की देवी मां भगवती के साथ ही विराजते हैं। मान्यता है कि पवित्र गंगा में स्नान और काशी विश्वनाथ के दर्शन मात्र से मोक्ष की प्राप्ति होती है। गार के समय सारी मूर्तियां पश्चिम मुखी होती है इस ज्योतिर्लिंग में शिव और शक्ति दोनों साथ ही विराजते हैं जो अद्भुत है ऐसा दुनिया में कहीं और देखा देखने को नहीं मिलता विश्वनाथ दरबार में गर्भ ग्रह का शिखर है इसमें ऊपर की ओर बंद श्री यंत्र से मंडित है।

काशी विश्वनाथ ज्योतिर्लिंग दो भागों में है दाहिने भाग में शक्ति के रूप में मां भगवती विराजमान है दूसरी और भगवान शिव वामन रूप में विराजमान है इसलिए काशी को मुक्त क्षेत्र कहा जाता है। बाबा विश्वनाथ के दरबार में तंत्र की दृष्टि से चार मुख्य द्वारा इस प्रकार हैं शांति द्वार, काल द्वार, प्रतिष्ठा द्वार, निवृत्ति द्वार, इशारों द्वारका तंत्र की दुनिया में अलग स्थान है पूरी दुनिया में ऐसा कोई जगह नहीं है। जहां शिव शक्ति एक साथ विराजमान हैं और साथ में तंत्र द्वार भी हो बाबा का ज्योतिर्लिंग गर्भ ग्रह में ईशान कोण में मौजूद है।

उसके बाद हम सब रामनगर कीले को देखने के लिये निकल पड़े ।

रामनगर का किला यूं तो ऐतिहासिक व पौराणिक महत्व का किला है। इसे जहां महाभारत काल से जोड़ा जाता है तक किला परिसर में तैयारी चलती है। गजब की रौनक रहती है उन दिनों इस किले में। इतना ही नहीं इसी किले में वेद ब्यास का मंदिर है। संग्रहालय और राजपरिवार का आवास है। परिसर में एक दक्षिण मुखी हनुमान मंदिर भी है। इसकी कलात्मकता पर्यटकों को बरबस आकर्षित करती हैं। इसी कारण से किले के कुछ हिस्से को पर्यटकों के लिए खोल दिया गया है। इसके अलावा रोजाना सैकड़ों लोग संग्रहालय को देखने आते हैं। इस किले का इस्तेमाल बालीवुड भी यदा कदा करता है। 'बनारस' और भैया जी सुपरहिट जैसी फिल्मों का फिल्मांकन यहा हो चुका है। सनी देयोल, अमीषा पटेल इस किले में अपना जौहर दिखा चुके हैं।

रामनगर के किले में मुगलकाल की वास्तुकला का अद्भुत दृश्य मिलता है। ऊंची-ऊंची दो सफेद मीनारें, मेहराबदार मार्ग और आंगन से होते हुए मीनारों तक पहंचा जा सकता है। किले की दीवारो पर कुछ अति प्राचीन शिलालेख भी हैं। महत्वपूर्ण तो यह कि यह किला गंगा तट पर स्थित है लेकिन इतनी ऊंचाई पर किले का निर्माण किया गया है कि इसे बाढ़ से कोई खतरा न हो। यानी 17वीं शताब्दी में इसके निर्माणकर्ताओं की दूरदृष्टि ऐसी थी कि यह किला अब 21वीं शताब्दी में भी ज्यों का त्यों दिखता है।
रामनगर के किले को देखने के उप्रात हम मुजियम से मे अलग-अलग तरह के सीक्के,बनारस के पुराने चित्र आदी बहुत सारी चीजे देखने को बहुत कुछ देखने को मिला।

13 फरवरी 2020 को हम बनारस से बोधगया बस के द्वारा एक नये सफर पर चल पड़े। और 14 फरवरी 2020 को बोधगया के महाबोधि मंदिर गये थे।

देश के बिहार राज्य में स्थित बौद्ध गया शहर में बना महाबोधि मंदिर बौद्ध धर्म का सबसे महत्वपूर्ण केन्द्र और पवित्र स्थानों में माना जाता है। यहीं पर बोधि वृक्ष के नीचे गौतम बुद्ध को केवल्य ज्ञान की प्राप्ति हुई थी। यह मंदिर वास्तुकला व बौद्ध धर्म की परम्पराओं का सुन्दर नमूना है। विभिन्न धर्मों एवं सम्प्रदायों के लोग यहां आध्यात्मिक शांति की तलाश में आते हैं। 19वीं सदी में ब्रिटिश पुराविद् कनिंघम तथा भारतीय पुराविद् डॉ. राजेन्द्र लाल के निर्देशन में 1883 ई. में यहां खुदाई की गई और काफी मरम्मत के बाद मंदिर के पुराने वैभव को स्थापित किया गया। ऐतिहासिक एवं धार्मिक बौद्ध मंदिर को वर्ष 2002 ई. में यूनेस्को द्वारा विश्व विरासत सूची में शामिल कर इसे विश्व विरासत घोषित किया गया। यहां देश के ही नहीं पूरे विश्व के पर्यटक खास कर बौद्ध मत में विश्वास रखने वाले धर्मावलम्बी बड़ी संख्या में यहां आते हैं। यह मंदिर विश्व के मानचित्र पर अपना विशेष धार्मिक महत्व रखता है।

मंदिर का निर्माण सम्राट अशोक द्वारा किया गया था। मंदिर में भगवान बुद्ध की पद्मासन मुद्रा में भव्य मूर्ति स्थापित है। जनश्रुति के अनुसार यह मूर्ति उसी जगह स्थापित है जहां बुद्ध को कैवल्य ज्ञान की प्राप्ति हुई थी। मंदिर के चारों ओर पत्थर की नक्काशीदार रेलिंग लगी है जो प्राचीन अवशेष है। मंदिर की दक्षिण दिशा में 15 फीट ऊँचा अशोक

स्तम्भ नजर आता है जो कभी 100 फीट ऊँचा था। मंदिर पेगोडानुमा बहुअलंकृत आर्य एवं द्रविड शैली में 170 फीट ऊँचा है।

मंदिर परिसर में उन सात स्थानों को भी चिन्हित किया गया है जहां बुद्ध ने ज्ञान प्राप्ति के बाद सात सप्ताह व्यतीत किये थे। मुख्य मंदिर के पीछे बुद्ध की सात फीट ऊँची लाल बलुआ पत्थर की विराजन मुद्रा में मूर्ति स्थापित है। मूर्ति के चारों ओर लगे विभिन्न रंगों के पताके मूर्ति को आकर्षक बनाते हैं। मूर्ति के आगे बलुआ पत्थर पर बुद्ध के विशाल पदचिन्ह बने हैं, जिन्हें धर्म चक्र परिवर्तन का प्रतीक माना जाता है।

यहां बुद्ध ने पहला सप्ताह बिताया था। परिसर में स्थित बोधि वृक्ष एवं खड़ी अवस्था में बनी बुद्ध की मूर्ति स्थल को अनिमेश लोचन कहा जाता है। यह चैत्य मंदिर के उत्तर–पूर्व में बना है जहां बुद्ध ने दूसरा सप्ताह व्यतीत किया था। इस स्थल पर 16 जनवरी 1993 को श्रीलंका के राष्ट्रपति रणसिंधे प्रेमादास द्वारा सोने का जंगला एवं सोने की छतरी का निर्माण करा कर इसे आकर्षक स्वरूप प्रदान किया। मुख्य मंदिर का उत्तरी भाग चंकामाना नाम से जाना जाता है जहां काले पत्थर का कमल का फूल बुद्ध का प्रतीक बना है जहां बुद्ध ने तीसरा सप्ताह बिताया

था।

छत विहीन भग्नावशेष स्थल रत्न स्थान पर बुद्ध ने चौथा सप्ताह व्यतीत किया था। जनश्रुति के अनुसार बुद्ध यहां गहन चिन्तन में लीन थे तब उनके शरीर से प्रकाश की एक किरण निकली थी। प्रकाश की किरणों के इन्हीं रंगों का उपयोग विभिन्न देशों द्वारा यहां लगे पताके में किया जाता है। मुख्य मंदिर के उत्तरी दरवाजे से थोड़ी दूर स्थित अजयपाल वटवृक्ष के नीचे बुद्ध ने पाँचवां सप्ताह व्यतीत किया था। मंदिर के दांई ओर स्थित मुचलिंद सरोवर जो चारों तरफ से वृक्षों से घिरा है और सरोवर के मध्य में बुद्ध की मूर्ति स्थापित है जिसमें विशाल सर्प को बुद्ध की रक्षा करते हुए बताया गया है। यहां बुद्ध ने छठा सप्ताह व्यतीत किया था। परिसर के दक्षिण–पूर्व में स्थित राजयातना वृक्ष के

नीचे बुद्ध ने सातवां सप्ताह व्यतीत किया था।

बोध गया घूमने का सबसे अच्छ समय अप्रैल–मई में आने वाली बुद्ध जयंति का अवसर है जब यहां सिद्धार्थ का जन्मदिन विशेष उत्साह एवं परम्परा के साथ मनाया जाता है। इस दौरान मंदिर को हजारों मोमबत्तियों से सजाया जाता है तथा जलती हुई मोमबत्तियों से उत्पन्न दृश्य मनुष्य के मानस पटल पर अंकित हो जाता है।

बौद्ध गया में 1934 ई. में बना तिब्बतियन मठ, 1936 में बना बर्मी विहार तथा इसी से लगा थाईमठ, इंडोसन–निप्पन–जापानी मंदिर, चीनी मंदिर एवं भूटानी मठ पर्यटकों के लिए दर्शनीय स्थल हैं। बौद्ध गया में स्थित पुरातात्विक संग्रहालय अपने आप में बेजोड़ है।

बोधगया के बा हम सब नालंदा विश्वविद्यालय जो अब परिअटक स्थल बन गया है उसे देखने के लिए गये। वहाँ के गाईड ने हमें नालंदा के बारे बहुत सारी बाते बताई जैसे की:

स्थापना

नालंदा का मतलब नालम और दा दो शब्द हैं यही दो शब्द के मेल से नालंदा बना नालम का मतलब होता है कमल जो ज्ञान का प्रतीक होता है और दा का मतलब जो पूरे विश्व को ज्ञान दान में दिया, विज्ञान दान में दिया वही जगह को नालंदा कहा गया। नालंदा दुनिया का पहला दुनिया का पहला अंतरराष्ट्रीय आवासीय विश्वविद्यालय था। नालंदा विश्वविद्यालय को 3 राजाओं ने मिलकर बनाया था। 3 राजा में से पहले राजा कुमार गुप्त ने बनाया है जो मगध के राजा थे जो नया नाम राजगीरा से प्रसिद्ध है जो 15 किलोमीटर की दूरी पर स्थित है मगध या राजगीरा था, एक विशाल साम्राज्य था।

बिहार, बंगाल, उड़ीसा, उसकी राजधानी राजगीरा था। पहले राजा कुमार गुप्त ने नालंदा विश्वविद्यालय का निर्माण पांचवी सदी में किया था। यानी सोलह 100 साल पूर्व। दूसरे राजा कन्नौज के राजा थे जिनका नाम हर्षवर्धन थे जिन्होंने सातवीं शताब्दी में दूसरे तले का निर्माण किया। तीसरे राजा के देवपाल राजा जो बंगाल के राजा थे उन्होनें नवी ताब्दी में तीसरे तले का र्माण किया।

स्वरूप

यह विश्व का प्रथम पूर्णतः आवासीय विश्वविद्यालय था। विकसित स्थिति में इसमें विद्यार्थियों की संख्या करीब १०,००० एवं अध्यापकों की संख्या २००० थी। इस विश्वविद्यालय में भारत के विभिन्न क्षेत्रों से ही नहीं बल्कि कोरिया, जापान, चीन, तिब्बत, इंडोनेशिया, फारस तथा तुर्की से भी विद्यार्थी शिक्षा ग्रहण करने आते थे। नालंदा के विशिष्ट शिक्षाप्राप्त स्नातक बाहर जाकर बौद्ध धर्म का प्रचार करते थे। इस विश्वविद्यालय की नौवीं शती से बारहवीं शती तक अंतरर्राष्ट्रीय ख्याति रही थी।

परिसर

अत्यंत सुनियोजित ढंग से और विस्तृत क्षेत्र में बना हुआ यह विश्वविद्यालय स्थापत्य कला का अद्भुत नमूना था। इसका पूरा परिसर एक विशाल दीवार से घिरा हुआ था जिसमें प्रवेश के लिए एक मुख्य द्वार था। उत्तर से दक्षिण की ओर मठों की कतार थी और उनके सामने अनेक भव्य स्तूप और मंदिर थे। मंदिरों में बुद्ध भगवान की सुन्दर मूर्तियाँ स्थापित थीं। केन्द्रीय विद्यालय में सात बड़े कक्ष थे और इसके अलावा तीन सौ अन्य कमरे थे। इनमें व्याख्यान हुआ करते थे। अभी तक खुदाई में तेरह मठ मिले हैं। वैसे इससे भी अधिक मठों के होने ही संभावना है। मठ एक से अधिक मंजिल के होते थे। कमरे में सोने के लिए पत्थर की चौकी होती थी। दीपक, पुस्तक इत्यादि रखने के लिए आले बने हुए थे। प्रत्येक मठ के आँगन में एक कुआँ बना था। आठ विशाल भवन, दस मंदिर, अनेक प्रार्थना कक्ष तथा अध्ययन कक्ष के अलावा इस परिसर में सुंदर बगीचे तथा झीलें भी थी।

प्रबंधन

समस्त विश्वविद्यालय का प्रबंध कुलपति या प्रमुख आचार्य करते थे जो भिक्षुओं द्वारा निर्वाचित होते थे। कुलपति दो परामर्शदात्री समितियों के परामर्श से सारा प्रबंध करते थे। प्रथम समिति शिक्षा तथा पाठ्यक्रम संबंधी कार्य देखती थी और द्वितीय समिति सारे विश्वविद्यालय की आर्थिक व्यवस्था तथा प्रशासन की देख--भाल करती थी। विश्वविद्यालय को दान में मिले दो सौ गाँवों से प्राप्त उपज और आय की देख--रेख यही समिति करती थी। इसी से सहस्त्रों विद्यार्थियों के भोजन, कपड़े तथा आवास का प्रबंध होता था।

आचार्य

इस विश्वविद्यालय में तीन श्रेणियों के आचार्य थे जो अपनी योग्यतानुसार प्रथम, द्वितीय और तृतीय श्रेणी में आते थे। नालंदा के प्रसिद्ध आचार्यों में शीलभद्र, धर्मपाल, चंद्रपाल, गुणमति और स्थिरमति प्रमुख थे। 7वीं सदी में ह्वेनसांग के समय इस विश्व विद्यालय के प्रमुख शीलभद्र थे जो एक महान आचार्य, शिक्षक और विद्वान थे। एक प्राचीन श्लोक से ज्ञात होता है, प्रसिद्ध भारतीय गणितज्ञ एवं खगोलज्ञ आर्यभट भी इस विश्वविद्यालय के प्रमुख रहे थे। उनके लिखे जिन तीन ग्रंथों की जानकारी भी उपलब्ध है वे हैं: दशगीतिका, आर्यभट्टीय और तंत्र। ज्ञाता बताते हैं, कि उनका एक अन्य ग्रन्थ आर्यभट्ट सिद्धांत भी था, जिसके आज मात्र ३४ श्लोक ही उपलब्ध हैं। इस ग्रंथ का ७वीं शताब्दी में बहुत उपयोग होता था।

प्रवेश के नियम

प्रवेश परीक्षा अत्यंत कठिन होती थी और उसके कारण प्रतिभाशाली विद्यार्थी ही प्रवेश पा सकते थे। उन्हें तीन कठिन परीक्षा स्तरों को उत्तीर्ण करना होता था। यह विश्व का प्रथम ऐसा दृष्टांत है। शुद्ध आचरण और संघ के नियमों का पालन करना अत्यंत आवश्यक था।

अध्ययन-अध्यापन पद्धति

इस विश्वविद्यालय में आचार्य छात्रों को मौखिक व्याख्यान द्वारा शिक्षा देते थे। इसके अतिरिक्त पुस्तकों की व्याख्या भी होती थी। शास्त्रार्थ होता रहता था। दिन के हर पहर में अध्ययन तथा शंका समाधान चलता रहता था।

अध्ययन क्षेत्र

यहाँ महायान के प्रवर्तक नागार्जुन, वसुबन्धु, असंग तथा धर्मकीर्ति की रचनाओं का सविस्तार अध्ययन होता था। वेद, वेदांत और सांख्य भी पढ़ाये जाते थे। व्याकरण, दर्शन, शल्यविद्या, ज्योतिष, योगशास्त्र तथा चिकित्साशास्त्र भी पाठ्यक्रम के अन्तर्गत थे। नालंदा कि खुदाई में मिलि अनेक काँसे की मूर्तियोँ के आधार पर कुछ विद्वानों का मत है कि कदाचित् धातु की मूर्तियाँ बनाने के विज्ञान का भी अध्ययन होता था। यहाँ खगोलशास्त्र अध्ययन के लिए एक विशेष विभाग था।

पुस्तकालय

नालंदा में सहस्रों विद्यार्थियों और आचार्यों के अध्ययन के लिए, नौ तल का एक विराट पुस्तकालय था जिसमें ३ लाख से अधिक पुस्तकों का अनुपम संग्रह था। इस पुस्तकालय में सभी विषयों से संबंधित पुस्तकें थी। यह 'रत्नरंजक' 'रत्नोदधि' 'रत्नसागर' नामक तीन विशाल भवनों में स्थित था। 'रत्नोदधि' पुस्तकालय में अनेक अप्राप्य हस्तलिखित पुस्तकें संग्रहीत थी। इनमें से अनेक पुस्तकों की प्रतिलिपियाँ चीनी यात्री अपने साथ ले गये थे। 16 साल पहले इस पुस्तकालय में आग लग गई थी जो 6 महीने तक जलती रही क्योंकि 16 सो साल पूर्व कागज का अविष्कार नहीं किया गया था और सारे पत्र ताम्र पत्र का होता था और उसके अंदर भोजपत्र होता था।

नालंदा पुरातत्वीय संग्रहालय

विश्वविद्यालय परिसर की विपरीत दिशा में एक छोटा-सा पुरातत्वीय संग्रहालय बना हुआ है। यहाँ खुदाई से प्राप्त अवशेषों को रखा गया है। इसमें भगवान बुद्ध की विभिन्न प्रकार की मूर्तियों का अच्छा संग्रह है। साथ ही बुद्ध की टेराकोटा मूर्तियाँ और प्रथम शताब्दी का दो जार भी इस संग्रहालय में रखा हुआ है।

ह्वेनसांग मेमोरियल हॉल

यह भी एक नवनिर्मित भवन है। यह भवन चीन के महान तीर्थयात्री ह्वेनसांग की याद में बनवाया गया है। इसमें उनसे संबंधित चीजें तथा उनकी मूर्ति देखी जा सकती है। नालंदा विश्वविद्यालय के जलने के बाद उससे जुड़े अधिकांश दस्तावेज समाप्त हो गए थे। ह्वेनसांग ने यहाँ से पढ़ाई करते हुए तथा उसके बाद इसके बारे में जो कुछ लिखा उससे हमें इस महान स्थान के बारे में काफी जानकारी मिल पाई।

नालंदा से विश्वविद्यालय देखने के बाद हम पटना के लिए निकले जाहाँ हमारे लिए होटल बुक करके रखा हुआ था। रात करीब 9-10 बजे के बाद अपने होटल पहुँचकर आराम किया क्योंकि अगले दीन हमें गोंवा वापसी की ट्रेन पकडनी थी।

पुरा भ्रमण बहुत अच्छी तरह से बीता बहुत कुछ नया देखने और सिखने को मिला और बिना कोई तकलीफ हम सब लोग गाते,गुन्नाते अपने गोंवा आराम से पहुँच गये। बनारस एक बहुत अच्छी जगह है और वहाँ की स्नस्कुती, खाना,वहाँ के लोगो का रहन-सहन भी मुझे बहुत अच्छा लगा अगर मुझे मोका मिले तो मैं बनारस और बोधगया दोबारा जाना पसंद करूगी।